देवदूत ।

तदेव काव्यं सफलं
उपयुक्तं हि यद्भवेत् ।
स्वेषां परेषां विदुषां
द्विषामविदुषामपि ॥

देव-दूत ।

हृदय-पटपर जननी जन्मभूमिके चित्रको
स्वर्गसे भी बढ़कर सुन्दर और सुखद
चित्रित करनेवाला एक कल्पित
कवि-कौशल ।

रचयिता—

रामचरित-चिन्तामणि, सूक्तमुक्तावली
आदिके कर्त्ता, सुकवि

प० रामचरित उपाध्याय ।

चैत्र १९७५ विक्रमाब्द ।

मूल्य छह आने ।

Printed by Chintaman Sakharam Deole, at the
Bombay Vaibhav Press, Girgaum, Bombay.

Published by Nathuram Premi Proprietor,
Hindi-grantha-Ratnakar, Karyalaya,
Hirabagh, Bombay.

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज ।

हिन्दीमें उच्च श्रेणीके ग्रन्थ प्रकाशित करनेवाली सबसे पहली और सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थमाला । प्रत्येक ग्रन्थ सुन्दर टाइपमें और उत्तम कागज पर प्रकाशित किया जाता है । प्रत्येक पुस्तक पठनीय और दर्शनीय होती है । अबतक इसमें ३७–३८ ग्रन्थ निकल चुके हैं । प्रत्येक पुस्तकालयमें इसका एक एक सेट अवश्य रहना चाहिए । स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं । आठ आने ' प्रवेश-फीस ' देनेसे स्थायी ग्राहक बना जा सकता है । ग्रन्थोंकी सूची मँगाइए ।

मैनेजर,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगाँव–बम्बई ।

" हैं धन्य भारतवर्षवासी,
धन्य भारतवर्ष है ।
सुरलोकसे भी सर्वथा,
उसका अधिक उत्कर्ष है ॥

—भारतभारती ।

गायन्ति देवाः किल गीतकानि
धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।
स्वर्गापवर्गस्य च हेतुभूते
भवन्ति भूयः पुरुषा सुरत्वात् ॥

—विष्णुपुराण ।

देव-दूत ।

पूर्वभाग ।

—:o:—

[१]

कोई भारतीय श्रेयस्वी
देवलोकमें पहुँच गया,
उसने वैसा स्थान मनोहर,
कभी न देखा रहा नया ।
जैसे ताराओंमें विधु है
वैसे त्रिभुवनमें वह लोक,
चकाचौंध दृगमें होती है
लख करके उसके आलोक ॥

[२]

देशहितंकर कामोंसे वह
धरतीपर विख्यात रहा,
अति पुनीत उसका जीवन था,
यश उसका अवदात रहा ।
इसी लिए ईश्वरने उसको
दिया हर्षसे स्वर्ग-निवास,
देश-व्रत सुखका साधन है
दुःखहेतु है काम-विलास ॥

[३]

ईश-कृपाको भारतीयने
दैव-कोपके सम जाना,
स्वर्गलोकसे शतगुण बढ़कर
अपने भारतको माना ।
कर्म-विवश हो किन्तु वहाँपर
उसको रहना था चिरकाल,
हाल न पाकर जन्मभूमिके
वह मन-ही-मन हुआ बेहाल ॥

[४]

देशनिकालेका दुख निशदिन
उसके मनको होता था,
कभी न सोता था पलभर भी
शोकातुर हो रोता था ।
कुछी दिनोंमें उसके तनमें
रक्त, मांस कुछ रहा नहीं,
आधि-ग्रस्त रहा पर दुखको
कभी किसीसे कहा नहीं ॥

[५]

एक दिवस पर एक देववर
उसकी दीन दशा अवलोक,
दया-द्रवित हो गया चकित भी
उसे स्वर्गमें देख सशोक ।
कहा देवने भारतीयसे
तुम्हें यहाँ भी क्या दुख है ?
जिसको यहाँ नहीं सुख होता,
उसको कहीं नहीं सुख है ॥

[६]

जो चाहे सो कहें आप पर
मैं क्यों मानूँ उसे सहर्ष,
स्वर्गलोकसे पूत पूज्य है
सौम्य, रम्य है भारतवर्ष ।
जो सुख-सिन्धु वहाँ है उसका,
यहाँ स्वप्नमें लेश नहीं,
विश्व-वेदका वही प्रणव है
वैसा दूजा देश नहीं ॥

[७]

पहली श्री, सम्पत्ति, सभ्यता
यद्यपि उसकी रही नहीं,
तदपि देव, वह योग्य-भूमि है,
उसकी जोड़ी कहीं नहीं ।
देव, मनुजको मनुज वहाँके
आश्रय देते आते हैं,
इसी लिए वे दानवीर हैं
दयावीर कहलाते हैं ॥

[८]

मैं पूजक हूँ पूज्य आप हैं
मैं हूँ मनुज देव हैं आप,
किन्तु बड़ेका काम यही है
छोटेका हर लेना ताप।
जो जन परके काम न आया,
उसने पाया जन्म वृथा,
वही अमर है जिसकी जगमें,
सुयशसहित रह गई कथा॥

[९]

आज्ञा कैसे दूँ पर विनती
करता हूँ दोनों कर जोड़,
सुनकर उसे पूर्ण कर देना
कभी नहीं लेना मुख मोड़।
स्वार्थमग्न हूँ पर परार्थसे
अलग नहीं रह सकता हूँ,
सुनकर समझोगे क्या सच मैं
कहता हूँ या बकता हूँ॥

[१०]

जाने कब तक मुझे कर्मवश
मिले यहाँसे छुटकारा,
प्रभु जाने क्या भोग रहा है
हा मेरा भारत प्यारा ।
क्या मेरे सन्देश उसे तुम,
जाकर देव सुनाओगे ?
मेरा ही उपकार न होगा
तुम भी दृग-फल पाओगे ॥

[११]

सच कहता हूँ भरत-भूमिके
ग्राम तुल्य है स्वर्ग नहीं,
मुझे मिले साकेत-रेणु यदि
भले मिले अपवर्ग नहीं ।
यदि तुम भारतमें जाओगे
शीघ्र नहीं फिर आओगे,
यदि मेरे कारण आओगे
पुनः शीघ्र ही जाओगे ॥

[१२]

जिस भारतमें भूप तुम्हारा,
देवराज भी जाता है,
भिक्षुक सा जाकर वह उसके
आगे कर फैलाता है।
फिर क्यों हिचकोगे निज मनमें,
जानेसे तुम देव, वहाँ,
नरदेवोंके देव मिलेंगे
तुम्हें विप्र भूदेव वहाँ॥

[१३]

हाँ पर जानेके पहले तुम
कर लो हिन्दीका अभ्यास,
क्योंकि उसीमें करना होगा
तुम्हें हृदयके भाव-विकाश।
भारतके वह सब भागोंमें
बोली, समझी जाती है,
इससे वहाँ राष्ट्र-भाषा भी
देव, वही कहलाती है॥

[१४]

असमंजस मनमें मत मानो
सुलभ वहाँका जाना है,
पंथ बता दूँगा मैं तुमको
या क्या तुम्हें बताना है–।
अष्ट सिद्धियाँ मिली हुई हैं
क्या कर सकते आप नहीं ?
तो भी विना कष्टके मेरा
हर सकते सन्ताप नहीं ॥

[१५]

चलकर आप यहाँसे नीचे
तुरत पहुँच जाना कैलास,
मनमें अति आनन्द मिलेगा,
नभमें करते हुए प्रकाश।
वासुदेवने व्रजमें देखा
नारदको आते जैसे,
प्रेम-चकित सानन्द लखेंगे
तुमको भी गिरीश वैसे ॥

[१६]

आर्यभूमि भी तुम्हें देववर,
अचल दृष्टिसे देखेगी,
मंगल मिलने आता है क्या ?
ऐसे मनमें लेखेगी।
सजल-नेत्र वह भुजा बढ़ाकर
तुमको भर लेगी निज गोद,
पुत्र-भावसे द्रवित तुम्हें भी
रोना होगा सहित प्रमोद॥

[१७]

मानसरोवर जाकर पहले,
गोते आप लगा लेना,
सन्ध्यावन्दन करना, पथके
श्रमको तुरत भगा देना।
कनक-पंकजों-बीच देववर,
ऐसी शोभा पाओगे,
ताराओंके बीच शशीके
भ्रमको तुम उपजाओगे॥

[१८]

आशुतोषके दर्शन करना,
चलकर तुरत वहाँसे आप,
विधिवत् उन्हें दण्डवत करना
फिर तुम चल देना चुपचाप ।
फिर अलकाको देख तुम्हारे
छक्के छूटेंगे तत्काल,
इन्द्रपुरीकी वह भगिनी है
हो जावेंगे नेत्र निहाल ॥

[१९]

गौरीशंकर शिखर हिमालय-
का है सबसे ऊँचा एक,
सावधान हो विबुध, उसीपर
चट चढ़ जाना सहित विवेक ॥
भारत और भारतीयोंको
लखना अपने ही सम जान,
गिर जाओगे तुरत, करोगे
यदि मनमें कुछ भी अभिमान ॥

[२०]

देव, तुम्हें सन्तोष इसीसे
पर होवेगा नहीं कभी,
क्योंकि आपने छटा न वैसी
देखी होगी कहीं कभी।

इस कारण तुम प्रिय भारतकी
परिक्रमा भी कर लेना,
चुन चुन कर वृत्तान्त वहाँके
अपने उरमें भर लेना॥

[२१]

यदि प्रदक्षिणा भारतकी तुम
कर लोगे वर देव, समाप्त,
तुरत तुम्हें त्रैलोक्य-भ्रमणका
हो जावेगा श्रेयस प्राप्त।

मेरे कहे मार्गसे चलना
तुमको श्रम होगा न विशेष,
दैवी तनु हो सफल तुम्हारी
मेरा भी दुख हो निःशेष॥

[२२]

गौरीशंकर शिखर छोड़कर
तुरत पहुँच जाना 'नयपाल,'
ऐसे गिरि ऊपर वह स्थित है
मानो भारतका है भाल ।
जहाँ आज तक गोब्राह्मणकी
रक्त-धार है बही नहीं,
वैसी मही पवित्रा दूजी
बची विश्वमें कहीं नहीं ॥

[२३]

प्रमथोंके सम मनुज वहाँके
अतिशय निर्भय हैं बलवान्,
उन्हें देख डरना मत मनमें
उनसे पाओगे सम्मान ।
भोली भाली स्त्रियाँ वहाँकी
भ्रू-विलास क्या जानेंगी ?
तो भी तुम्हें देव, स्मितमुख हो
अतिथि-शिरोमणि मानेंगी ॥

[२४]

वर्णाश्रमकी परिधिमध्यमें
किस प्रकार रहता है धर्म,
धर्मशास्त्रसे किस विधि भूपति,
कर सकता है शासन-कर्म ।
भारतमें स्वातन्त्र्य, सत्यका
किस प्रकार होता था मान,
इन बातोंका वहाँ सहजमें
देव, तुम्हें होगा अनुमान ॥

[२५]

विबुध, वहाँसे तुरत झपटकर
आप पहुँच जाना आसाम,
जहाँ प्रसिद्ध प्रतिष्ठित पूजित
कामाख्याका है वर धाम ।
भारत-जननी जान उन्हें तुम
आदरसे प्रणाम करना,
नीर-समीर तुम्हें यदि रुचिकर-
हों तो, कुछ विराम करना ॥

[२६]

बंगदेश है निकट उसीके
धीरे धीरे चल देना,
कोमलाङ्ग, श्रम दूर वहीं पर
रुककर चाहे कर लेना ।
क्योंकि वहाँ नागरिकोंकी है
नगरी कलकत्ता विख्यात,
लखने सुनने योग्य वहाँ है
लम्बी धोती लम्बी बात ॥

[२७]

अजगैबी श्वेताङ्ग ! भले ही
पहुँच वहाँ तुम जाओगे,
परिचय हुए विना पर पहले
आदर कभी न पाओगे ।
प्राण-विनाशी क्या न मनुजकी
श्वेत शंखिया होती है ?
रजत-भवनके भी भीतर क्या
नहीं सर्पिणी सोती है ?

[२८]

कामरूप हो रूपवान हो
मीठी बातें करते हो,
पर-उपकारी होनेका भी
मुखसे तुम दम भरते हो।
किन्तु ठगोंमें भी तो ये ही
लक्षण पाये जाते हैं,
हिला-मिलाकर पहले सबको
फिर वे गला दबाते हैं॥

[२९]

पूज्य देव, तुम दूत हमारे
बनते हो पर रखना याद,
वहाँ आपके विषय अनेकों
जनतामें होगा संवाद।
प्रजावर्गको तुम्हें देखकर
गूढ़ पुरुषका भ्रम होगा,
नृप-चरको भी साथ तुम्हारे
चलते चलते श्रम होगा॥

[३०]

यदि स्वराज्यकी सभा वहाँ पर
होती हो तो मत जाना,
यदि जाना तो चुप हो रहना
बक उठना मत मनमाना ।
फूँक फूँक कर पगको रखना
छान छान पानी पीना,
देवपुरीकी चाल न चलना
तुम्हें वहाँ यदि हो जीना ॥

[३१]

फिर तुम देव वहाँसे चलकर
तुरत उड़ीसाको जाना,
नीलाचलवासी हरिका भी
लखलेना अद्भुत बाना ।
वर्णाश्रमके भेद भावका
जहाँ न रहता तनिक विवेक,
महाप्रसाद सभी खाते हैं
साथ बैठकर होकर एक ॥

[३२]

उत्तरमुख हो फिर तुम चलना
मिल जावेगा तुम्हें विहार,
बौद्धकालमें देव, जहाँ पर
खुला हुआ था विद्या-द्वार।
ज्ञानवान हो, बड़े ध्यानसे
पाटलि-पुत्र देख लेना,
भारतकी प्राचीन दशाको
निज मनमें आश्रय देना॥

[३३]

विना कहे ही आप दौड़कर
अवधपुरीको जाओगे,
जो न गये तुम देव, वहाँ तो
श्रमका क्या फल पाओगे।
परदेसी असुरोंके नाशक
भूप हुए थे राम जहाँ,
सरयू-तट जाने पर रहता
नहीं पापका नाम जहाँ॥

[३४]

रामायणको पढ़ सुनकर जब
रामचरितको जानोगे,
इन्द्रपुरीसे अधिकाधिक तब
रामपुरीको मानोगे।
रामतुल्य क्या हो सकता है
भारतमें अब अन्य सपूत ?
जलधि-पार जाकर फिर आया
व्योममार्गसे जिसका दूत॥

[३५]

एक रात साकेत वास कर
तब काशी चल देना आप,
जहाँ उदङ्मुख गङ्गा बहकर
हरती है पाप, त्रय ताप।
महादेवके स्वर्ण भवनको
देव, देख लेना प्रत्यक्ष,
इन्द्रभवन भी हो न सकेगा
सपनेमें जिसके समकक्ष॥

[३६]

देव-सभासे कहीं अधिक है
देव, वहाँकी विज्ञ-सभा,
प्रभा प्रभाकरमें न मिलेगी
जैसी रहती वहाँ प्रभा।

वहीं सनातन धर्म-केन्द्र है
भुक्ति, मुक्ति है खड़ी वहीं,
त्रिभुवनकी सम्पत्ति-सिद्धियाँ
गलियोंमें हैं पड़ी वहीं॥

[३७]

काशी देख वहाँसे चलकर
तीर्थराज-दर्शन करना,
डुबकी मार त्रिवेणीमें तुम
फिर सन्ध्यावन्दन करना।

भरद्वाजके आश्रम जाकर
सुखसे रात विता लेना,
विविध नगर मगमें लखते फिर
मथुराजीको चल देना॥

[३८]

व्रजकी भूमि देख तुम लेना
स्वर्गभूमिसे प्यारी है,
देव, सत्य कहता हूँ मथुरा
तीन लोकसे न्यारी है ।
शुष्क करीर-कुञ्ज भी व्रजका
नन्दन वनसे अधिक कहीं,
यमुना-कूल-कदम्बवृक्षके
कभी कल्पतरु तुल्य नहीं ॥

[३९]

कंस-निकन्दन यदुनन्दनका
वहीं हुआ अवतार रहा,
अन्यायोंका लदा हुआ जब
भारत-भूपर भार रहा ।
देव, देवपति जिसे देखने-
को दिनरात तरसता है,
व्रजकी रजमें खगमें मृगमें
तरुमें प्रेम सरसता है ॥

[४०]

गोकुल नन्दगाँव बरसाने
और महावन भी जाना,
सुनते हुए शोर मोरोंके
और कोयलोंका गाना ।

पूज्यदेव, देवत्व तुम्हारा
हो जावेगा सफल वहीं,
रह जानेकी इच्छा तुमको
मनमें होगी प्रबल वहीं ॥

[४१]

कृष्ण कृष्ण कह कालिन्दीके
जलमें तुम मज्जन करना,
ब्रजकी रजका तिलक लगाकर
आँखोंमें अञ्जन करना ।

देव, तदपि तुम भूल न जाना
यद्यपि खाना होगा फेर,
बने जहाँ तक चित्रकूटके
जानेमें करना मत देर ॥

[४२]

चित्रकूट पर जाकर तुमको
नतमस्तक रहना होगा,
प्रेम-युक्त एकाग्रचित्त हो,
राम राम कहना होगा ।
देव रामने क्योंकि किया था
जाकर कभी वहीं विश्राम,
जिसने रहने नहीं दिया था
भारतमें असुरोंका नाम ॥

[४३]

उत्तर मुखसे दक्षिण मुख हो
तुमको जाना होगा दूर,
विना परिश्रम किये कभी क्या
देख सकोगे तुम मैसूर ?
सब देशी राज्योंमें जिसकी
राजनीति है बढ़ीहुई,
शिक्षा दीक्षा धर्मनीति भी
नई रीति है बढ़ीहुई ॥

[४४]

नन्दनवनसे चन्दनवनको
अधिक वहाँ जब पाओगे,
शंका है, फिर उसे छोड़ कर
भला यहाँ क्यों आओगे ?
चाहे कुछ हो किन्तु देव तुम
किसी भाँति घर पर आना,
जिसने परको अच्छा समझा
उसका अच्छा मर जाना ॥

[४५]

देव, बंबई-हातेको फिर
आप वहाँसे चालिएगा,
वाम ओर गुजरात मिलेगा
चरण वहाँ भी रखिएगा ।
फिर आजाना पंचवटी पर
गोदावरी-निकटमें आप,
रामचन्द्रके करों कटा था,
जहाँ भयंकर असुर-कलाप ॥

[४६]

उसके निकट नगर थाना है
जहाँ खरादिक रहते थे,
रावणके हो दास जहाँपर
भारतीय दुख सहते थे ।
देव, कभी क्या स्थिर रहता है
अन्यायीका राज कहीं ?
या असुरोंके कर भारतकी
जा सकती है लाज कहीं ? ॥

[४७]

विबुध, बंबई जब जाओगे
बोरीबन्दर स्टेशन पर,
मुझको है विश्वास भूल तुम
जाओगे तब अपने घर ।
वैसा सुन्दर स्थान नृपोंको
भी दुर्लभ है सच मानो,
सत्त्वर देखो उसे तभी तुम
अपने नेत्र सफल जानो ॥

[४८]

मुंबादेवीके दर्शन कर
रानीबाग देख लेना,
फिर चौपाटीपर जाकर तुम
आसन तुरत जमा देना।
नागरिकोंके संघ वहाँ पर
देव, देख सुख पाओगे,
उसके आगे इन्द्रसभाको
फीकी आप बताओगे॥

[४९]

यदपि उदास आप होवेंगे
उसे छोड़कर जानेमें,
तो भी शीघ्र आप चल देना
विबुध, राजपूतानेमें।
लश्करके तुम फूल-बागको
देखे बिना नहीं रहना,
स्वार्थसहित परमार्थहेतु हो
पड़ता है दुखको सहना॥

[५०]

देव, उसी लश्करके पश्चिम
तीर्थशिरोमणि पुष्कर है,
उसका भी दर्शन कर लेना
तुमको क्या कुछ दुष्कर है ?
करमें लेकर विधि वेदोंको
तुमको तुरत सुनावेंगे,
ज्ञान-दानसे तुम्हें तुष्ट कर
अपना शिष्य बनावेंगे ॥

[५१]

जन्म सफल कर आप वहाँसे
हो प्रसन्न जयपुर जाना,
अपने भाग्य सराहोगे तुम
नहीं पड़ेगा पछताना ।
रामनिवास बागमें जाकर
सन्ध्यासमय बैठ रहना,
सुखद स्वर्ग ही है न सृष्टिमें,
तुम्हें पड़ेगा यह कहना ॥

[५२]

देव, वहाँसे दिल्ली जाना
चाल बढ़ाकर ताबड़तोड़,
भूतल भरमें वैसी नगरी
नहीं बनी है उसकी जोड़।
भारत राजधानि द्वापरसे
उसे बनाता आता है,
तबसे ही वह देव दिनों दिन
नीचे गिरता जाता है ॥

[५३]

पाण्डव राज्य वहीं करते थे
कलियुग भी आरम्भ हुआ,
द्वेषानलसे ज्वाला फूटी
प्रकट फूटसे दम्भ हुआ।
कौरव पाण्डव लड़े परस्पर
कृष्णचन्द्रसा पक्ष मिला,
मानो कुन्द-कुञ्जमें आकर
गुड़हरका भी फूल खिला ॥

[५४]

कुछ कोसों पर निकट उसीके
पानीपत भूतल है शुद्ध,
जहाँ हुआ था पूर्व समयमें
आर्योंका यवनोंसे युद्ध ।
देख निरस्त्र भारतीयोंको
तुम्हें न हो आश्चर्य कहीं,
क्योंकि आज जैसा भारत है
वैसा ही था सदा नहीं ॥

[५५]

फिर तुम कुरुक्षेत्रको जाना
पगके फाल बढ़ा करके,
जिसने भारतको धर पटका
अपने शीश चढ़ा करके ।
तबसे बेसुध पड़ा हुआ है
उसे आज भी ख्याल नहीं,
कौन वस्तु है जिसको जगमें
खाता काल-व्याल नहीं ?

[५६]

देव, वहींपर कृष्णचन्द्रने
गीता-गान सुनाया था,
कौरव-दलको धूल मिलाकर
अद्भुत नाम कमाया था।
कैसे कैसे वीर हमारे
हाय वहींपर लीन हुए,
जिनसे होकर हीन आज हम
निर्जल-थलके मीन हुए॥

[५७]

फिर आजाना भूमि-स्वर्गमें
जिसको कहते हैं कश्मीर,
रूपवान हैं मनुज जहाँके
देव, तुम्हींसे विमल शरीर।
केसर-सने पवन सेवनकर
मार्गश्रम खो जावेगा,
जम्बू देख तुम्हारे मनमें
स्वर्ग-भ्रम हो जावेगा॥

[५८]

सुन्दरियोंसे सावधान हो
वहाँ विचरना सच मानो,
स्वर्वेश्याओंसे भी बढ़कर
उनको कला-कुशल जानो ।
साधु-वृत्तिसे रह सकते हो
एक रात बस देव, वहाँ,
भूख लगे तो खा सकते हो
टटके किसमिस सेव वहाँ ॥

[५९]

देव, वहाँसे चलकर फिर भी
उसी हिमालय पर आना,
भारतका कर भ्रमण अनूपम
तीर्थ भ्रमणके फल पाना ।
होगा तुम्हें परिश्रम यद्यपि,
तो भी तुम हर्षित होना,
दुःख उठाकर स्वयं, जगतमें
पड़ता है पर-दुख खोना ॥

[६०]

भारतकी दुर्दशा देखकर
और जानकर उसके हाल,
शोक छोड़कर, तुरत क्रोधसे,
हो जावेंगी आँखें लाल ।
हृदय पकड़ गौरीशंकर पर
प्रियवर, फिर भी चढ़ जाना,
भारतके सम्मुख तुम मेरे
सन्देशोंको पढ़ जाना ॥

उत्तरभाग ।

[१]

उसी शिखरके शीश बैठना
शान्तरूप कमलासन मार,
वय किशोर बनकर कर लेना
देव, आप अपने भुज चार ।
मानव-वपुसे भारत देखा
पर अब रहा न उसका काम,
अब कुछ करिये काम हमारा
जिससे रहे तुम्हारा नाम ॥

[२]

जटा मुकुटको प्रथम बनाकर
तिलक लगा लेना फिर भाल,
माला गले डाल फूलोंकी
कर लेना निज रूप रसाल।
डमरू, शंख, पताका, घंटी
चारों हाथोंमें लेना,
प्रात समयमें ध्वजा उड़ाकर
बाजे सभी बजा देना॥

[३]

भारतवासी अद्भुत बाजे
सुनकर दौड़े आवेंगे,
हाथ जोड़कर सजलनेत्र हो
मस्तक तुम्हें झुकावेंगे।
स्वर्गनिवासी अलकावासी
कैलासी भी देखेंगे,
देव, देख उपकार-निरत सब
तुम्हें आत्म-सम लेखेंगे॥

[४]

बाजे छोड़ खड़े हो जाना
उसी समय जाना मत भूल,
चारों हाथोंमें फिर लेना
चक्र, सुदर्शन, खड्ग, त्रिशूल ।
रोते हुए भारतीयोंको
रोनेसे वारण करना,
फिर तुम मेरे सन्देशोंका
ऊँचा उच्चारण करना ॥

[५]

प्यारे भारतसे यों कहना
आया हूँ मैं तेरे पास,
अपने सुतके सन्देशे सुन,
क्यों उदास है, न हो निराश ।
स्वर्गनिवासी देव मुझे तू
अपने सुतका साथी जान,
ज्ञान-नेत्रको खोल देख तो
तू सुखिया है स्वर्ग-समान ॥

[६]

रात बीतने पर विमानमें
जैसा जग हो जाता है,
राहु-वदनसे मुक्त निशाकर
नभमें ज्यों सुख पाता है ।
वर्षाऋतुके अन्त अवनितल
जैसे शोभित होता है,
उसी भाँति तू भी अब दुखसे
छूटेगा, क्यों रोता है ? ॥

[७]

कंचुक छोड़ दिव्य तन विषधर
श्वास छोड़ता है जैसे,
बन्धन-मुक्त सिंह हो गजके
शीश तोड़ता है जैसे ।
वैसे ही निज प्रतिबन्धकको
तू भी दूर भगावेगा,
मत हताश हो भारत, तेरा
फिर पहला दिन आवेगा ॥

[८]

ऐसे मीठे वचन तुम्हारे
सुनकर हा मम भारत दीन,
गद्‌गद्‌ पुलकित हो जावेगा
जल पाकर ज्यों प्यासा मीन ।
हाथ जोड़कर उत्कन्धर हो
तुम्हें एकटक देखेगा,
फिर जो बोलोगे वह उसको
देव-वाक्यसम लेखेगा ॥

[९]

फिर तुम कहना हे भारत, मैं
यद्यपि तुमसे बिछुड़ा हूँ ।
पर अपनी कर्तव्य-प्रगतिमें
नहीं तनिक भी पिछड़ा हूँ ।
भारतीय-संस्था स्थापित है
सत्यवादिनी यहाँ बड़ी,
समालोचना जिसमें तेरी
होती रहती सदा कड़ी ॥

[१०]

उस संस्थाका मैं मंत्री हूँ
वज्री उसका है अध्यक्ष,
कुछी कालमें मीठा उसका
फल भी होवेगा प्रत्यक्ष ।
सौ सदस्य हैं भारतवासी
उसमें बड़े बड़े मतिमान,
जिनका प्रण है ध्रुव सा निश्चल
कठिन क्रोध है काल समान ॥

[११]

तेरे दुखका सच्चा साँचा
यहाँ बनाया जाता है,
सत्य दोष सुरपतिका भी नित
यहाँ दिखाया जाता है ।
किन्तु किसीने नहीं किसीका
अब तक कर पाया मुख बन्द,
यहाँ कपटका जाल नहीं है
सभी विचरते हैं स्वच्छन्द ॥

[१२]

एक दिवस जब उसी सभाने
तेरा पहला खींचा चित्र,
और सत्यके साथ निडर हो
तेरा वर्णन किया चरित्र ।
चित्र चरित्र देख सुन करके
मनमें लज्जित हुआ सुरेश,
पर तो भी वह हँस कर बोला
धन्य धन्य है भारत देश ॥

[१३]

वर्तमानका दीन चित्र फिर
तेरा खींचा गया वहाँ,
जिसको देख सभाका सत्वर
सिर हो नीचा गया वहाँ ।
तेरे चरित श्रवण कर सबने
मिलकर हाहाकार किया,
फिर तेरे दुख-दाताओंको
विविध भाँति धिक्कार दिया ॥

[१४]

हा तेरे कंकाल चित्र लख
नहीं इन्द्रसे रहा गया,
तेरे परिभव-दुखको सुनकर
तनिक न उससे सहा गया।
करसे वज्र उठाकर, उठकर
बड़े वेगसे बोल पड़ा,
हा हा मेरा बलिदाता भी
भोग रहा है दुःख बड़ा॥

[१५]

जिस भारतसे बलि पा करके,
सभ्यो, मैं हूँ बना सुरेश,
हाय, वही फिर मेरे रहते
विवश हुआ पाता है क्लेश।
अब भी मेरा वज्र बना है
तुम भी भारतवासी हो,
किसी यत्नसे उसे उबारो
कैसे बने उदासी हो?

[१६]

जिससे सुख मिलता है उसको
दुख देना है पाप बड़ा,
सुख-दाताके दुखको सुनकर
होता है सन्ताप बड़ा ।
चाहे असुरोंके मनमें यह
होता होवे कभी न ज्ञान,
किन्तु हमारे मनमें निश दिन
रहना चाहिए इसका ध्यान ॥

[१७]

भारत, वज्रीकी बातें सुन
भारतवासी फड़क उठे,
रक्त-वदन हो एक स्वरसे
सरुष सिंहसम कड़क उठे ।
रखिए रोक अशनिको अपने
आज्ञा हमको मिल जावे,
सूखे सरमें जल भर जावे
कनक-कमल भी खिल जावे ॥

[१८]

हम भारतवासी भारतको
यदि जाने पावें सुरराज,
काज आज ही बनें देशके
रह जावे संस्थाकी लाज ।
कहिएगा तो फिर भारतको
सुखिया कर आ जावेंगे,
दुखी देशको देख दयालो,
नहीं स्वर्गसुख पावेंगे ॥

[१९]

भारत, तब यों कहा इन्द्रने
इसमें मेरा स्वत्व नहीं,
किन्तु विष्णुसे आज्ञा लेकर
जाने दूँगा तुम्हें सही ।
धैर्य धरो तुम तबतक मनमें
जबतक आज्ञा पाता हूँ,
सभा-विसर्जन करो हर्षसे
पास विष्णुके जाता हूँ ॥

[२०]

जय जय असुर-विनाशक वज्रिन्
जय महेन्द्र जय देव सुरेश,
जय भूतलके मौलि-मुकुट-मणि,
जय भारत प्यारे जय देश ।
यों कह करके सभा विसर्जित
हुई, न मनमें घबराना,
आशा है अति शीघ्र हमारा
होवेगा भारत आना ॥

[२१]

देश, समय है महाबली तुम
करो प्रतीक्षा कुछ उसकी,
उद्यमसे क्या फल मिलता है
करो परीक्षा कुछ उसकी ।
सहित बान्धवोंके सचमुच मैं
किसी यत्नसे आऊँगा,
दुःख उठाऊँगा पर तुमको
दुखसे कभी छुड़ाऊँगा ॥

[२२]

एक दिवस सहदेव निकटमें
जाकर मैंने प्रश्न किया,
भारतकी भावी कैसी है ?
इसपर उसने ध्यान दिया ।

बहुत समयतक सोच-समझकर
उसने उत्तर दिया यही,
अब जैसी भारतकी स्थिति है
सदा रहेगी वही नहीं ॥

[२३]

जैसे तृणमें अनल छिपा है
धूम छिपा है पावकमें,
वैसे अनुपम शक्ति छिपी है
भारतके अभिभावकमें ।

समय प्राप्त कर वह प्रकटेगी
कष्टोंको कर देगी दूर,
दुष्ट देखते रह जावेंगे
भारत हो जावेगा शूर ॥

[२४]

हानि उठाई है भारतने
और खलोंकी बात सही,
अभी और वह दुख पावेगा
अधिक दिनोंतक किन्तु नहीं ।
सब ऋतुयें बीतीं, जागृतिका
अब आ पहुँचा है ऋतुराज,
खिले कुञ्जसा लख अपनेको
उमँग पड़ेगा युवक-समाज ॥

[२५]

कलियुगहीमें सतयुग होगा,
हो जावेंगे आर्य कुबेर,
भारत-भूका स्वर्ग बनेगा
इसमें नहीं लगेगी देर ।
पर कुछ उद्यम करना होगा
उसको धैर्यसमेत अभी,
भाग्य-भरोसे क्यों कर होगा
भला मनोरथ सिद्ध कभी ॥

[२६]

नहीं निरक्षर मनुज एक भी
भारतमें रह जावेगा,
भिक्षुक खोजे भी न मिलेगा
ऐसा दिन भी आवेगा।
उमड़ पड़ेगा सिन्धु प्रेमका
फिर भी, खो जावेगी फूट,
सैंही वृत्ति रहेगी उसकी
कायरता जावेगी छूट ॥

[२७]

प्यारे भारत, इन बातों पर
दृढ़तासे करना विश्वास,
काया पलट जायगी तेरी
काम किया कर, हो न हताश।
तीस कोटि सुत होवें जिसके
वह क्यों परका मुख देखे,
विस्मय होगा यदि मृगेन्द्र भी
अपनेको निर्बल लेखे ॥

[२८]

एक सभा है और यहाँ पर
'नागरिका' जिसका है नाम,
भारत, हिन्दीमें ही जिसके
होते रहते हैं सब काम।
तुलसी उसके संचालक हैं
सूर सभापति स्थायी हैं,
उसके कोशाध्यक्ष रसीले
हरिश्चन्द्र सुखदायी हैं॥

[२९]

उसके सभ्योंमें अहमितिका
या मत्सरका लेश नहीं,
उनके निकट न हठ रहता है,
उनका कपटी वेष नहीं।
न वे किसीके ऊपर अपनी
प्रभुता प्रकटित करते हैं,
सावधान हो कार्य-निरत हैं
अपवादोंसे डरते हैं॥

[३०]

सेवा सबकी वे करते हैं
सेवा नहीं कराते हैं,
कवि कोविदके निकट आप ही
अवनत होकर जाते हैं।
हिन्दी हितचिन्तक तेरे भी
हिन्द, रहेंगे क्या ऐसे!
मान-दानके विना किये वे
सम्मानित होंगे कैसे?॥

[३१]

इसी सभासे निकल रहा है
'कर्म' नामका मासिकपत्र,
स्वर्ग-भूमि पर मानों स्थित है
हिन्दी-गुण-गौरवका सत्र।
भूप विलासी दुख पाता है
उसमें यह निकला था लेख,
वज्रीने निज विलासिताको
छोड़ा तुरत उसीको देख॥

[३२]

पर तुझमें इस कर्म पत्रका
हो सकता है नहीं प्रचार,
क्यों कि इसे पढ़नेका तुझको
अभी नहीं है कुछ अधिकार।
भारत, जीभ लेखनी तेरी
पर न सदा रह सकती बन्द,
शारद-घनसे कह तो कब तक
नभमें छिप सकता है चन्द॥

[३३]

हिन्द, यहाँ अधिकार मिले हैं
देवोंको जिसविध जितने,
उसी प्रकार स्वत्व हमको भी
मिले हुए हैं क्यों उतने ?।
रूप-रंगमें, जाति-धर्ममें
यहाँ बना है भेद नहीं,
पर-वैभवको देख किसीके
मनमें होता खेद नहीं॥

[३४]

यहाँ स्वप्नमें भी न किसीके
सिर पर चढ़ सकता है स्वार्थ,
एक धर्म है एक कर्म है
स्वर्गवासियोंका परमार्थ ।
एक सहस्र वर्षके पहले
तेरा भी था काम यही,
प्रिय भारत, तिल भर भी तुझमें,
रहा पापका नाम नहीं ॥

[३५]

यहाँ सबल जन निर्बल जनकी
ग्रीवा नहीं दबाते हैं,
ऊँचे चढ़ता देख किसीको
नीचे नहीं गिराते हैं ।
सभी सभीके साथ सदा ही
प्रेम-भाव दिखलाते हैं,
भारत, अपने सद्गुण-गणको
सबको सब सिखलाते हैं ॥

[३६]

सुनकर स्वर्ग-वृत्तको मनमें
भारत, करना शोक नहीं,
किसी भाँति दुर्विधिकी गतिको
कोई सकता रोक नहीं,
सच कहता हूँ समय सदासे
सबका पलटा खाता है,
मनमें यही भरोसा रखना
जो आता सो जाता है ॥

[३७]

रोग शोक या दैव दुःखका
यहाँ सुना था नाम नहीं,
अपना दुखड़ा परसे रोना
रहा किसीका काम नहीं ।
पर तेरा वियोग प्रिय भारत,
मुझसे सहा नहीं जाता,
कहा नहीं जाता है दुखको
मुझसे रहा नहीं जाता ॥

[३८]

यों तो भारत, तुझे हृदयमें
प्रतिपल देखा करता हूँ,
तेरे ऊपर हुआ निछावर
निजको लेखा करता हूँ।
किन्तु एक दिन तुझे स्वप्नमें
मैंने देख लिया जैसे,
तेरी वह छवि आँखोंमें है
मुखसे प्रकट करूँ कैसे ? ॥

[३९]

जननी जन्मभूमि तेरी थी
करमें लिये हुए करवाल,
तुझे गोदमें बैठाये थी
करके अपने रूप विशाल।
उसके कन्धे पर निज करको
तू हँस हँसकर रखता था,
तुझे देखती थी वह, उसको
प्रेम-मग्न तू लखता था ॥

[४०]

उसने फिर निज रत्न-मुकुटको
तेरे सिरपर चढ़ा दिया,
झुक कर तेरे कानोंमें कुछ
गुप्त मन्त्र भी पढ़ा दिया ।
तब तूने अस्ताचल देखा
अचल नेत्रसे देश, सरोष,
डूब रहा था वहाँ दिनेश्वर
होनेवाला रहा प्रदोष ॥

[४१]

एक दिवस तू देश, मुकुटधर
किसी सोचमें पड़ा रहा,
तेरे सिरपर छत्र लगा कर
मैं भी चुपके खड़ा रहा ।
इसी बीचमें किसी विप्रने
आकर तुझको तिलक किया,
माला गले डाल कर तेरे
हाथ उठा आशीस दिया ॥

[४२]

भारत, मैंने यह भी देखा
तू था सिंहासन-आसीन,
बीत चली थी रात अँधेरी,
समय रहा प्रातःकालीन।
शारद-घन पश्चिम जाते थे
चलती पूर्वी वायु रही,
सूर्य उदित होता आता था,
मानो हँसती रही मही॥

[४३]

भारत, कभी किसी निशि फिर भी
तू आया दृग-पथ मेरे,
दायें द्रोणाचार्य खड़े थे
बायें व्यासदेव तेरे।
ब्रह्मचर्य्य धारण कर तूने,
छोड़ दिया था नगर-निवास,
मन देकर बनमें करता था
शस्त्रों शास्त्रोंका अभ्यास॥

[४४]

देख निरस्त्र कभी फिर तुझपर
हिंस्र जातियाँ टूट पड़ीं,
भारत, और ठगोंके हाथों
वेढब तुझपर लूट पड़ी।
उसी समय हा कातर दृगसे
लगा देखने तू आकाश,
दैवी शक्ति सशस्त्र चतुर्भुज
आ पहुँची तब तेरे पास ॥

[४५]

उत्कन्धर हो उन्नताद्रि पर
तू सवेग चढ़ता था हिन्द,
विकृतवदन हो शस्त्र दिखाकर
रोक रहे थे तुझे पुलिन्द ।
पर तेरे पग पड़े न पीछे
धीरे धीरे बढ़ते थे,
पुष्प-वृष्टि कर नभमें चारण
तेरी स्तुतिको करते थे ॥

[४६]

रात अँधेरी थी सावनकी
घटा घिरी थी चारों ओर,
गरज रहा था बरस रहा था
चपला-चमकसहित घन घोर ।
पर तू सिंहपीठ पर बैठा
कार्यस्थलपर अड़ा रहा,
मैंने देखा तेरे सम्मुख
जगत्पिता भी खड़ा रहा ॥

[४७]

अन्तःपुरमें विलासिता भी
रस-बातोंकी लगा झड़ी,
मादक द्रव्योंको लेकर वह
तुझे रिझाती रही खड़ी ।
किन्तु बड़ी दृढ़तासे तूने
उसको घरसे दिया निकाल,
अब भी दृगसे टला नहीं वह
भारत, तेरा रूप रसाल ॥

[४८]

एक बार तू गजरथ पर था
दिग्गज जुते रहे उसमें,
चन्द्र सूर्यके चक्र लगे थे
तारे गुँथे रहे उसमें।
तीस कोटि हम ध्वजा उड़ाकर
करते थे जय जय तेरी,
नभमें नाच रहे थे चारण
और बजाते थे भेरी॥

[४९]

किसी समय असुरोंसे सुरपति
लड़ने चला गया पाताल,
इन्द्रासन पर तू बैठा था
भारतीय लख हुए निहाल।
अनुचर बनकर देवोंने भी
अपना भाग्य सराहा था,
अब जो कुछ होवे, पर पहले
किसने तुझे न चाहा था?॥

[५०]

स्वर्ग छोड़कर किसी युक्तिसे
पहुँच गया मैं तेरे पास,
भारत, फूले अँग न समाया
लख कर तेरे वदन-विकाश ।
ज्यों तेरी पग-रज लेता था
नींद निगोड़ी टूट गई,
सिद्धि-मालिका मानो करसे
हाय ! अचानक छूट गई ॥

[५१]

देव, इसी विध फिर भारतसे
कह देना बातें दो चार,
धैर्य धरे वह और कुछी दिन
मत हताश हो किसी प्रकार ।
सुखके बाद मिला दुख जिसको
फिर भी वह सुख पावेगा,
होकर उदित अस्त होगा रवि
फिर भी सम्मुख आवेगा ॥

[५२]

किसी हेतुसे मैं न शीघ्र यदि
भारत, आने पाऊँगा,
किसी युक्तिसे तब देवोंको
तेरे निकट पठाऊँगा ।
भक्ति-भावसे मान्य जानकर
करना उनका शिष्टाचार,
कर विश्वास, तुरत वे जाकर
कर देंगे तेरा उद्धार ॥

[५३]

किसे नहीं भयदायक होगा
भारत, तेरा रूप विराट,
तू सब देशोंका शिक्षक है
तू सब देशोंका सम्राट ।
तीस कोटि मुख साठ कोटि कर,
कभी किसीको मिले कहीं ?
सुधा-सरोवर, तुझे छोड़कर
वेद कमल क्या खिले कहीं ? ॥

[५४]

कल्पवृक्षसा पनप रहा है
प्रकटित भी होंगे फल फूल,
धर्ममूल, दृढ़ रह, अपनेको
सपनेमें भी कभी न भूल।
मर्यादा-सागर नागर है
गुण-रत्नोंसे मण्डित है,
कृष्ण केसरी तू भूपर है
ज्ञानी, मानी, पण्डित है॥

[५५]

भारत, यदपि पुराना तू है
किन्तु हुआ है वृद्ध नहीं,
कौन कार्य है कठिन जिसे तू
कर सकता है सिद्ध नहीं ?।
पर तू अपने वर विक्रमको
सत्साहसको भूल गया,
दास-वृत्तिको सुखद समझ कर,
हा, निर्लज्ज हो फूल गया॥

[५६]

अहिपति, खगपति, मृगपति सा हो,
क्यों भारत, तू रोता है ?
हो जा खड़ा बड़ा सुख होगा,
पड़ा पड़ा क्यों सोता है ? ।
कौन वस्तु है ऐसी जगमें
जो है तेरे पास नहीं,
हो कटिबद्ध काम कर अपना
कहीं किसीका त्रास नहीं ॥

[५७]

मेरे सन्देशे सुन वह भी
जो कुछ मेरे लिए कहे,
सत्वर आकर उसे सुनाना
भूल न जाना स्मरण रहे ।
मानो प्यासे हुए किसीको
अंमृत-घूंट पिला देना,
या मुरझाये चन्दन-तरुमें
अनुपम फूल खिला देना ॥

[५८]

घन घन-रवको देख श्रवण कर
सुख पाता है यथा मयूर,
तुम्हें देख, सुन देश-सन्देशा
मेरा भी होगा दुख दूर ।
मुझ सा ही सब भारतीय भी
मंगल मोद मनावेंगे,
दिनकरके दर्शनको पाकर
क्यों न कमल खिल जावेंगे ? ॥

[५९]

मैं कैसा ही हूँ पर तुमसे
होवेगा ही मम उपकार,
आश्रितके अवगुणपर सज्जन
क्या करते हैं कभी विचार ?
किन्तु हिन्दकी शोभा लखकर
रह मत जाना देव, वहीं,
बिना भाग्य फूटे क्या छूटा
कभी किसीका देश कहीं ? ॥

[६०]

विजय मनाऊँगा जीवन भर
सदा तुम्हारी कहीं रहूँ,
अमर तुम्हारा अमर नाम हो
और कहो क्या तुम्हें कहूँ ? ।

अपना देश छोड़कर मुझसा
तुमको रहना पड़े नहीं,
कभी परायेसे पलभर भी
परिभव सहना पड़े नहीं ॥

समाप्त ।

स्वर्गमें नरक ।

जननी जन्मभूमिश्च
स्वर्गादपि गरीयसी ।

स्वर्गमें नरक ।

१-गया जब देशनायक देवपुरमें,
भरा था हर्ष उसके दिव्य उरमें ।
उसे थी चाह सुर-सुख भोगनेकी,
त्रिविध दुखकी प्रगतिको रोकनेकी ॥

२-लगा वह देखने शोभा वहाँकी,
उसे उपमा दिलाऊँ मैं कहाँकी ।
मनों छविने वहीं पर जन्म पाया;
मनो उसको स्वयं विधिने बनाया ॥

३-स्फटिकमणिसी जहाँकी सन्मही थी,
जहाँपर दुग्धकी सरिता बही थी ।
फली थीं कल्पतरुकी वाटिकायें,
सुधाजलसे भरी थीं वापिकायें ॥

४-कनक-मन्दिर बने थे सब किसीके,
वहाँ रिपु हों भला क्यों कब किसीके?
जरासे हीन नारी और नर थे,
सुखी थे सर्वदा ही सब अमर थे ॥

५-किसीके चित्तमें चिन्ता नहीं थी,
न भयकी भावना भ्रमसे कहीं थी ।
नहीं थी चाहकी चर्चा कहीं पर,
सुखोंकी इति हुई मानो वहीं पर ॥

६-यदपि वह स्वर्ग लखकर खूब फूला,
तदपि उसको न भारतवर्ष भूला ।
जिसे निज देशमें श्रद्धा नहीं है,
विपद पशु है वही, पामर वही है ।

७-जिसे दृढ़ हो गई है देशपूजा,
उसे रुचता न कोई देव दूजा ।
उसे अपवर्ग-सुख भी कुछ नहीं है,
उसे सुखमूल है तो देश ही है ॥

८–लगा वह स्वर्गमें रहने निरन्तर,
लगा पर दुःख भी सहने निरन्तर ।
नरकसे कम न था वह स्थान उसको,
न भूला क्योंकि जन्मस्थान उसको ॥

९–कनक-गृहमें कुसुमशय्या लगी थी,
वहीं पर अप्सरायें रस-पगी थीं ।
विमन हो देशनायक सो रहा था,
हृदयको हाथसे वह खो रहा था ॥

१०–सिसकता था उसासें खींचता था,
मनो-मन झीखता था, चीखता था ।
मनो सर्वस्व उसका खो गया था,
मनो मघवा अकिञ्चन होगया था ॥

११–भरे थे अश्रुसे हा नेत्र उसके,
मनो तन पर पड़े थे वेत्र उसके ।
कभी लेकर जँभाई ऐंठता था,
कभी 'हा राम' कह उठ बैठता था ॥

१२-कभी 'हा देश भारत' कह रहा था,
मनो वह दास्यके दुख सह रहा था।
मनो उसकी मनोगति स्थिर नहीं थी,
कहीं वह था,सुमति उसकी कहीं थी॥

१३-मनों वह देखता था स्वप्न जाग्रत,
मनो वह कह रहा था दैशिक व्रत।
उसे जब जन्म-जगती याद आई,
प्रबल पीड़ा हुई उसकी सवाई॥

१४-लगा वह गद्गद स्वर बोलने तब,
मनोगत भावको भी खोलने तब।
अरे भारत दुलारा प्राण-प्यारा,
छुटा तू हाय कैसे नेत्र-तारा॥

१५-कहूँ यदि स्वर्गको तेरे बराबर,
बड़ा अन्याय होगा तो सरासर।
तुझे कुलदेव अपना मैं कहूँगा;
नहीं परदेशमें दुखको सहूँगा॥

१६–यहाँकी अपसरायें सुन्दरी हों;
निरी गोरी गुणोंसे भी भरी हों।
मुझे तो देश-ललनायें भली हैं,
भ्रमर मैं, वे कमल-वरकी कली हैं॥

१७–यदपि मिलती यहाँ मुझको सुधा है,
तदपि तव वारि आगे वह मुधा है;
यहीं प्रिय हो यहाँकी कल्प-लतिका;
मुझे प्रिय हो स्वदेशी सोमलतिका॥

१८–कनक-मन्दिर जड़े रत्नों यहाँके;
सदृश हैं झोंपड़े तेरे वहाँके।
तदपि मन क्यों न इनसे रीझता है,
स्वगृहको खोजता है, खीझता है॥

१९–यहाँके खीर-खाये हानिकर हैं,
परम प्रिय शाक तेरे रस-निकर हैं।
अरे भारत! दिखा दे रूप अपना,
मुझे तू क्यों हुआ है हाय सपना!॥

२०-यहाँकी देवतायें स्वार्थ-रत हैं,
मिले जिनसे उन्हींमें ये निरत हैं।
सदा ये खारही हैं हाथ तेरे,
तदपि मद कर रही हैं साथ तेरे॥

२१-सुकृतका फल कहूँ या पापका फल,
यहाँ पर पारहा हूँ दुःख प्रति पल।
समय वह कब मिलेगा हाय मुझको,
दृगोंसे देख लूँगा देश, तुझको॥

२२-परोंमें प्रीति होती क्रूरकी है,
सुहावन ढोल लगती दूरकी है।
खुली है पोल आने पर यहाँकी,
भली है भूमि तेरी सी कहाँकी॥

२३-हुआ है भूमिसुत सा हाल मेरा,
यहाँ पर मैं बना हूँ दास तेरा।
नरक-दुख स्वर्गमें भी मिल रहा है,
गरल-गुल मानसरमें खिल रहा है॥

२४-लुभाता है न नन्दन-वन मुझे यह,
हृदयमें है बना मधुवन सदा वह।
न काशी सी कभी अमरावती है,
न सुखदा है, न कुछ शोभावती है॥

२५-तरसते देव हैं तेरे लिए सब,
जँचेगा तू नहीं भारत, किसे कब?
महीका तू बना है शीश-भूषण,
जगत-पूषण, मिला तुझमें न दूषण॥

२६-करे यदि ईश फिर भी जन्म मेरा,
बना सेवक रहूँ मैं हिन्द, तेरा।
करे वह पशु, मनुज या कीट मुझको,
पड़े पर छोड़ना पलभर न तुझको॥

२७-चहे मरु-भूमि हो या उर्वरा हो,
स्वजननी किन्तु भारतकी धरा हो।
मिले मथुरा, अयोध्या और काशी,
सखा मेरे वहाँके हों निवासी॥

२८–मुझे करनी पड़े निज धेनु-सेवा,
चहे सत्तू मिले या मिष्ट मेवा।
जपूँ मैं हिन्द, हिन्दू और हिन्दी,
उन्हीं पर बुद्धि मेरी हो मलिन्दी॥

२९–कभी पर हाथका लट्टू न होऊँ,
खुशामदमें नहीं निज जन्म खोऊँ।
रहूँ होता निछावर देश ऊपर,
रहे मम शीश ऊपर नित्य भूपर॥

३०–न चाहूँ स्वर्ग या अपवर्गको मैं
तजूँ क्यों देश अपने वर्गको मैं?
मिलूँगा मैं तुझे चाहे कभी हो,
परोंकी क्यों मुझे चाहें कभी हों?॥